Chapter-2

द्वितीय अध्याय

समकालीन परिस्थितियाँ

द्वितीय अध्याय

समकालीन परिस्थितियाँ

मध्यकालीन गुजरात [विक्रम की १६ वीं से १८ वीं सदी के अंत तक] की राजनैतिक, सामाजिक एवं साहित्यिक तथा धार्मिक परिस्थिति पर विचार करते समय कई विद्वानों ने जो अपने मत व्यक्त किये हैं उनमें संशोधन की भारी आवश्यकता है। जब तक एकांगी, संदिग्ध एवं अप्रमाणिक निष्कर्षों और सिद्धांतों का पूरा पूरा प्रत्याख्यान कर सही वस्तु का प्रकाशन नहीं होता तब तक भ्रम के बने रहने या उसके अधिक फैलने की पूरी गुंजाईश बनी हुई है।

डॉ० के० एम० मुंशी ने विशेष कर अखा के युग-खंड को " जीवन में निराशा, दुःख एवं परलोकाभिमुखता का समय " बता कर उसकी बानी में " जीवित मृत्यु का संदेश " [Gospel of living death] सुना है[१]। आचार्य गोवर्धन-राम त्रिपाठी ने सं० १५८६ वि० से सं० १६२८ वि० तक की कालावधि को राजनैतिक क्षुब्धता का युग बता कर साहित्य रचना की दृष्टि से उसे " अंधकार युग " कहा है[२]। कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह ने " अक्षय रस " के संपादन में डॉ० मुंशी के उपर्युक्त मत के

---

1. Gujarat and its literature. K.M.Munshi, 1935, P.229-30
2. Classical Poets of Gujarat. G.M.Tripathi, 1958 P.24

आधार पर इस युग को समाज के हतपराक्रम, हतवीर्य, हतस्वाभिमान एवं निम्नस्तर की दरबारी चाटुकारिता से भरा बताया है। वे लिखते हैं............. ......"शिक्षित वर्ग में अध्ययन-स्वाध्याय के प्रति उदासीनता उत्पन्न हो गई थी। व्यभिचार, रिश्वत, हत्या, डाकेजनी और विश्वासघात की बातें सुन कर लोग चौंकते नहीं थे। इस प्रकार से वे उसके अभ्यस्त हो चुके थे। गुजरात पूर्णतया मुगल साम्राज्य का अंग बन गया था।.......... परिणाम-स्वरूप यह मान्यता जनसाधारण में घर करती जा रही थी कि जीवन के समस्त ऐश्वर्य, भोग एवं सांसारिक संबंधों की अपेक्षा पानी का बुलबुला कहीं अधिक स्थायी है।..... यह कहने की आवश्यकता नहीं कि वह युगखंड व्यापक रूप से अराजकता, अव्यवस्था और असुरक्षा का था[१]।

आचार्य उमाशंकर जोशी[२] ~~बलवन्त~~ तथा श्री नरसिंहराव दिवेटिया[३] ने डॉ० के० एम० मुंशी तथा श्री त्रिपाठी के इन मतों की निस्सारता साबित करने के प्रयत्न करके एतद्‌विषयक शेष कार्य के प्रति अंगुलिनिर्देश किया है। बिना इस कार्य को पूर्ण किये आलोच्य युगखंड का सही चित्र उपलब्ध नहीं किया जा सकता। अत: प्राप्त प्राचीन इतिहास ग्रंथों, विदेशी यात्रियों के यात्रा वर्णनों, तत्कालीन जैन एवं जैनेतर कवियों के संस्कृत एवं प्राकृत में रचित रासादि ग्रंथों तथा अखा की सभी रचनाओं के मनोयोगपूर्ण अध्ययन के आधार पर विवेच्य युग की राजकीय, सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक परिस्थितियों

---

१. अक्षय रस: पृ०१ से ११

२. अखो - एक अध्ययन : पृ०११३ से १३६

३. गुजराती भाषा अने साहित्य, पुस्तक -२ : नरसिंहराव दिवेटिया, सन १९५१ पृ०१९३

का समुपलब्ध चित्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

राजनैतिक परिस्थिति

मुगल सम्राट अकबर के राज्य काल के सुवर्ण समय [सन् १५६३-१६०५ ई०] से अखा का जीवन प्रारंभ हो कर जहाँगीर [सन् १६०५-१६२७ ई०] और शाहजहाँ [सन १६२६-१६५८ ई०] के शांतिपूर्ण शासन काल में विकसित होते हुए औरंगज़ेब के राज्य काल [सन् १६५८- १७०७ ई०] के द्वितीय दशक में समाप्त होता है।

प्रस्तुत समयावधि के प्रारंभिक वर्षों में उदीयमान मुगल सल्तनत के साथ अमीरों और मिरजाओं के संघर्ष [सन् १५७२ -१५९२ ई०] तथा शेष वर्षों में से सन् १६०९ में दक्षिण भारत के मलिक अंबर की गुजरात पर चढ़ाई, सन १६२१ में जहाँगीर के खिलाफ शाहजहाँ की बगावत[1], सन १६३१-३२ ई० का भयंकर दुर्भिक्ष, औरंगज़ेब के द्वारा सन १६४४ में अहमदाबाद के सबसे बड़े जैन मंदिर " चिंतामणि " में गौहत्या कर उसे मस्जिद में बदल देना, बादशाह मुरादबक्श की [सन् १६५७-५८ ई.] " आप मुरादी[2] " तथा सन् १६६४ ई० में शिवाजी की सूरत लूंट आदि दुर्घटनाओं से गुजरात सचमुच ही संत्रस्त

---

१. बगावत की नाकामयाबी के पश्चात् दोनों पक्षों में की गई संधि की सूचना :

ज्ञानी विवेकी ठेरव्या राय त्यारे आसुरीनाथाणां उठी जाय,

अदल थयुं त्यारे सवा शेर विष्टि करतां चूक्युं वेर ।।७०५ ।। छप्पा

२. जहां लोक वेद पोहोचत नहीं सो " आप मुरादी " शहेर ।। ४ ।।

– अक्षय रस - साखी, अकल अंग पृ०

अवश्य हुआ । अखा कृत भजन की द्वयार्थक पंक्तियों[१] से ऐसी असुरक्षा, अंधाधुंधी एवं अतंत्रता की व्यंजना ली भी जा सकती है, तथापि विभिन्न नद- नदियों एवं पहाड़ियों से सुरक्षित, धन दौलत से अतीव समृद्ध एवं बेहद उपजाऊ ऐसे गुजरात की विशाल भूमि पर इन हरकतों का वैसा ही प्रभाव पड़ा जैसे किसी आपूर्ण जलाशय से बड़े घटादि बर्तनों के द्वारा थोड़ा बहुत पानी उलीच लेने पर उसके पानी पर पड़ता है । अर्थात् छोटे बड़े झंझावतों के बावजूद अहमदाबाद की स्थापना सन् १४११ ई० समय से लेकर १८ वीं सदी के अंत तक के तीन सौ वर्षों के विशाल काल खंड में गुजरात प्राय: विकासमान, शांत एवं उत्तरोत्तर समृद्ध रहा । गुजरात की उस समृद्धि एवं उसके उपादानों का क्रमश: अवलोकन करेंगे ।[२]

---

१. इस नगरी में ना सुले सोणा, नीत भागे और नीत होय रोणा
जिस नगरीका राजा नढंगा, सर्वे लोक चले आप रंगा
काल मेवासी नित्यो सो लूटे, पाड़े कोट दरवाजो तुटे
राजा सदाये रहे अबुधा, बफीर न चाले सूधा
शाह लोक छुपा रहे छाना फिरे नगरमें लोक गुमाना ।
— अक्षय रस — भजन ६, पृ०१०८

२. दृष्टव्य:

" Ahmedabad (Gujarat) is particularly rich in noble Buildings and during the time of its glory extending from its foundation to the 13 th AD. -a Period about three three centuries-undoubtedly was one of the handsomest cities in the world."
-Oxford History of India V.A.Smith .27

। गुजरातनके सांस्कृतिक इतिहास खंड-२, रत्नमणिराव
पृ०४२८

शिल्प एवं स्थापत्य

गुजरात का मुस्लिम युगीन शिल्प हिन्दू एवं मुस्लिम संस्कृतियों के समन्वय का उत्तम प्रतीक है[1] गुजरात के कारीगरों ने मंडपों, अलंकृत स्तंभों एवं तोरणों आदि अपनी हिन्दू शैली के विशिष्ट प्रयोगों द्वारा तथा हिलते-डुलते मीनारों[2] की मौलिक रचना करके मुस्लिम स्थापत्य में अद्भुत नूतनता का संचार किया। मुस्लिम शिल्प कला का प्रभाव हिन्दू स्थापत्य पर भी पड़ा। इस युग में निर्मित हिन्दू मंदिरों में विशालता, भव्यता एवं हवा तथा प्रकाश की अद्भुत आयोजना की गई। हिन्दू एवं जैन मंदिरों के अपूर्व शिल्प संपन्न "गवाक्ष" और "जाली"[3], अलंकृत स्तंभ, आलीशान गुम्बद आदि इस विशिष्ट शिल्प के प्रमाण है।

1. " In Ahmedabad (Gujarat) itself, the Hindu influence continued to be felt throughout .Even the mosques are Hindu or Jain in every detail " - Ferguson.

   -गु० सांस्कृ० इति० खंड-२ पृ० ४२६

2. " Their minarets the only minarets that in beauty of out line and rich-ness of detail, surpass those of cario ,are the Chief glory of the Ahmedabad Mosques ."

   -गुजरातनुं पाटनगर अहमदाबाद : रत्नमणिराव सन् १९२५ पृ० २८९

3. " In this Class of window tracery India stands alone it is purely Indian Development of sculpture's craft having its origine in the Hindu Temple tradition. It owned nothing to persian art."

   गु० पा० अमदा० पृ० २६५

अहमदशाह, मुजफ्फरदसूरा, हैबतखां आदि द्वारा अहमदाबाद और चांपानेर में स्थापित मस्जिदें, शेख एहमद खटु गंजबक्श और शाहआलम साहब, अहमदशाह और उनकी बेगमों के रोज़े, "होज़े कुतुब" - कांकरीआ तालाब; मरूच, अहमदाबाद और पाटण के किले आदि गुजरात की स्वतंत्र सल्तनत के स्मारक जहाँगीर और शाहजहाँ के समय तक आते आते कुछ जीर्ण अवश्य हो गये थे किंतु इन बादशाहों और उनके सूबेदारों ने इन को दुरस्त करवाया था। इतना ही नहीं शाहजहाँ ने अपने "शाही महल" [सन् १६३२ ई०] तथा आजमखां ने अपने "आजमखां महल" [सन १६३७ ई०] का कलापूर्ण निर्माण कर इस वैभव को और समृद्ध किया। तरह तरह के फल, फूल और मेवा से भरे "बागे-नगिना", "वागे-फिरदौश", "फतेह बाग" आदि बड़े बड़े बागों के कारण अहमदाबाद सदैव वसंत ऋतु-सा आच्छादित रहता था। कहा जाता है कि "मुहम्मद बेगड़ा" प्राय: हर ग्रीष्म ऋतु में अहमदाबाद में ही रहता था। जहाँगीर और शाहजहाँ के समय इन बागों को अलंकृत एवं पुन: जीवित करने के प्रयत्न किये गये थे। शाहजहाँ ने "शाही बाग" की सन् १६३२ ई० में रचना करवा कर बीती बहारों को ताज़ा किया।

अपने शासन काल के पूर्व की सोने के सिक्के टंकित करनेवाली टकसालों में जहाँगीर ने एक और टकसाल स्थापित कर गुजरात के गौरव एवं महत्त्व को और वृद्धिंगत किया। इन टकसालों के सिक्कों पर खुदे शब्दों से भी गुजरात के शान-शौकत की स्पष्ट सूचना मिलती है। किसी सिक्के में अहमदाबाद को "महान शहर" [शहरे मुअज्ज़म] कहा गया है तो किसी में "महाराज्यों

का स्थान " [दार-अल-सल्तनत] अकबर ने अपने सिक्कों में अहमदाबाद को " टकसाल का स्थान " [दार-अल- दबे] कहा है। जहाँगीर की टकसाल के सिक्कों पर लिखा रहता था : नूरजहाँ,जहाँगीर की पत्नी, अहमदाबाद की स्त्री सूबेदार । ये टकसालें बादशाह मुरादबक्स और बादशाह औरंगज़ेब के शासन काल तक विद्यमान थीं।

ऐतिहासिक महत्त्व के ये स्मारक भी अखा युग के शाही वैभव, गुजरात की समृद्धि एवं प्रजा जीवन की शांति के प्रतीक हैं[१]।

हिन्दुओं की स्थिति और शासन व्यवस्था

अकबर के समय से गुजरात के स्वतंत्र सल्तनत की हुकूमत के अस्त होने के पश्चात् गुजरात की व्यवस्था के लिए दिल्ली से सुबेदारों की नियुक्ति होने लगीं। इन सूबेदारों में विशेषकर राजा टोडरमल, राजा विक्रमसिंह, सुंदरदास तथा महाराज जशवंतसिंह आदि हिन्दू सूबेदार मुग़ल राज्य-सत्ता के बड़े महत्त्व-पूर्ण एवं विश्वासपात्र दरबारी थे। उस समय के गुजराती सूबेदारों में " इतिमादखान " भी विशेष उल्लेखनीय है।

राज्यकाज के ऊँचे ऊँचे ओहदों पर हिन्दुओं की नियुक्ति मुहम्मद

---

१. " ई.सन १६०५ मां अकबरशाहना मृत्युथी तेना पुत्र नुरुद्दीन मुहम्मद जहांगीरना हाथमां सामाज्यनी सत्ता आवी अने आशरे सो वर्ष ई.स.१७०७ सुधी औरंगज़ेब बादशाहना समय सुधी अहमदाबाद सारी व्यवस्थामां हतुं अने एनी आबादी वधती गई। "

-गु.पा.अमदा. पृ.७५

और मुजफ्फर द्वितीय के राज्य काल से ही की जाती थी । हिन्दू अमीरों में मलिक जीवन खत्री, मलिक पियाकदास, राय अमीनचंद, राजा नरसिंहदेव आदि ~~प्रमुख थे~~ प्रसिद्ध थे । राजदरबार के " खत-नवीस " खास करके यहाँ के नागर एवं कायस्थ ही होते थे । फारसी पढ़े लिखे नागरों के पास राजकाज के महत्त्वपूर्ण मजमुन लिखवाये जाते थे । इसके अतिरिक्त यहाँ के गुजरातियों को सैन्य में भी भर्ती किया जाता था । अपने युद्ध कौशल के कारण सैन्य में " गुजराती दल " विशेष रूपसे रखा जाता था । इसके अतिरिक्त " यहाँ के हिन्दुओं के साथ सुलतानों ने विवाह संबंध भी जोड़े थे । अहमदशाह के पुत्र मुहम्मदशाह दूसरा का विवाह इडर की राज-कन्या के साथ हुआ था । सुलतान कुतुबुद्दीन और सुलतान बहादुर आदि ने भी हिन्दू कन्याओं के साथ विवाह किये थे[१]। देश की हिन्दू प्रजा के साथ अपने संबंध दृढ़ करनेवाली इस परंपरा का अनुसरण अकबर में भी देखा जा सकता है ।

इन सबके अतिरिक्त अहमदशाह की न्यायप्रियता, मुहम्मद बेगड़ा द्वारा अपनी प्रजा एवं व्यापारियों के जानमाल की रक्षा के उपाय, कृषि के विकास के लिए बड़े बड़े तालाब खुदवा कर उनका संरक्षण करना और राजा टोडरमल के द्वारा जमीन की " जमा बंदी " व्यवस्था, अनाथालय, अस्पताल, डाक-व्यवस्था, मदरसा, पाठशालाओं और मुसाफिरखानों की स्थापना : दुष्काल की दशा में राज्य कोष से बड़ी बड़ी रकमें देकर जनता को राहत पहुँचाने के प्रयास : शाहजहाँ द्वारा " चिंतामणि मंदिर " को पुनः बंधवाने का फरमान,

---

१. गु० सांस्कृ० इति० खंड -२ पृ० ४३४

विशेष करों में से मुक्ति, भील-कोली -काठी आदि लूटेरों और डाकुओं के त्रास को आजमखां के द्वारा दूर करना आदि आदि कार्यों से राज्य में शांति, सुव्यवस्था और समृद्धि बनी रही[2] होने के कारण मुस्लिम शासकों के प्रति हिन्दू समाज आदर एवं विश्वास की दृष्टि से देखता था ।

प्रजा जीवन की स्वस्थता एवं शांति की प्रतीति अकबर के समकालीन जैन कवि " राजसागर सूरि " कृत [सं. १७२२ वि.] " निर्वाण रास " से भी होता है ।[3]

---

१. अ. कर्म करे ने फलनी आश, ए तो हरिमार्गमां मेवास ।। १७७ छप्पा
आ. टीला टपका काढे खास जाण्यो मारग पण के मेवास ।। २१० छप्पा

२. दृष्टव्य: " देशनुं एकंदर वातावरण उधमातियुं के भयप्रेरक कहेवा जेवुं नराए नहोतुं. एने सत्तरमी सदीना उत्तरार्ध ने अढारमी सदीना पूर्वार्धमां जे काळो केर मरेठा हुमलाखोरोए वरताव्यो तेने मुकाबले तो आ युग अद्वितीय शांति साम्राज्यनो हतो." - साहित्य दर्शन. विजयराय वैद्य. पृ. ९५

३. जेमांहि वरति जयजयकार, जेमां सकल वस्तु विस्तार :
जे दीठई उपजई आल्हाद, एहवुं नगर श्री अहिम्मदावाद ।१
जेमां सुजन लोकहिं घणा, पहुचाडिं मनकी कामणा
जे दीठिं नाठई विखवाद, एवुं नगर श्री अहिम्मदावाद । २
चोरासी चउटा जिहां भलां, वस्तु वानां जोइई तेतला
ठामि ठामि जिहां सकल संवाद, एहवुं नगर श्री अहिम्मदावाद ।३
जिहां मद गलता मयगल गमई, चउगडिआं नित्य नित्य गडगडिं
त्रिपोलिई नौबतिनो नाद एहवुं नगर श्री अहिम्मदावाद ।४
चतुर पुरूष वडराई करिं, जिहां घोडा धारा गति धरई
गायन गाई सरलई साद, एहवुं नगर श्री अहिम्मदावाद । ५

इस स्वस्थता एवं शांति के अन्य कारण हो सकते हैं। भारत में ईस्वी० की १० वीं -- ११ वीं सदी से इस्लामी हमले शुरू हो गये थे। वे हमले हिन्दू जनता के लिए बड़े ही कष्टप्रद, हतोत्साहक, अराजकताप्रेरक, अव्यवस्थाजनक एवं भय-भावना के प्रेरक रहे। परंतु इन कटु अनुभवों से हिन्दू जनता इस्लामी शासन पद्धति से भली भाँति परिचित भी हुई। अत: गुजरात को ही लक्ष्य बनाकर जब आक्रमण होने लगे तब यहाँ की जनता उतनी किंकर्तव्यविमूढ़ नहीं रही जितनी कि १० वीं से लेकर १४ वीं सदी में उत्तर भारत की जनता रही।

दूसरी बात यह भी कही जा सकती है कि सन् १००० से लेकर १२०० ई० तक के प्रारंभिक आक्रमणों का उद्देश्य भारत की स्वर्ग-भूमि को केवल लूटना भर था। जिस देश में घी दूध की नदियाँ बहती थीं -- जो स्वयं इनकी निगाहों में " सोने की चिड़िया " जैसा अप्रतिम था, उसके वैभव को लूटकर वे

धजा तोरण मंडप पूतली, कोरणाई बहु शोभा मिलि :
जेहमां स्वा जिन प्रसाद, एह्वुं नगर श्री अहिम्मदावाद। ६
आप रूपथी अधिका घणां निरखी रूप जिहां रामा तणां
इंद्राणि मूकई उनमाद, एह्वुं नगर श्री अहिम्मदावाद। ७
जिहां वाहिनी दाहिनी वदई, जिहां लक्ष्मी निश्चल थइ रहिं,
जिहां षाट दरिसण, एह्वुं नगर श्री अहिम्मदावाद। ८
जिहां दानि दान देता हसिं, कलावंत कला अभ्यसई
पुण्यवंत परिहरई प्रमाद, एह्वुं नगर श्री अहिम्मदावाद। ९

-गु० पा० अमदा० पृ० ५९

अपने साथ ले जाना चाहते थे । अत: उन दिनों उन्होंने भारत की जनता के साथ अत्यंत क्रूर और नृशंस बर्ताव किया । किंतु तेरहवीं शती के प्रारंभ से हमलावरों की अभिलाषा इसी देश में जम करके अपनी सत्ता स्थापित करने की रही । ऐसे आक्रमकों में गुलाम वंश का कुतुबुद्दीन पहला आक्रामक है जो इस प्रदेश का प्रथम मुस्लिम शासक बन सका । कुतुबुद्दीन, अलाउद्दीन खीलजी, सिकंदर लोदी आदि से लेकर बाबर के आने तक के समय में यहाँ की जनता ने भरसक यातनायें सही । किंतु बाबर, हुमायुं, अकबर तथा जहाँगीर और शाहजहाँ में परधर्म-सहिष्णुता के साथ स्वधर्म की कुछ सही परख भी थी । इनके शासन का उद्देश्य भी कुछ निराला था । ये अपनी कीर्ति का फैलाव और प्रभाव देखना सुनना चाहते थे । शासक यहाँ की जनता से उतना नहीं टकराते जितना वे आपस में भिड़ते थे । अत: इनकक शासन उतना क्रूरतापूर्ण एवं क्षोभकारी नहीं रहा जितना कि पहले के शासकों का था । अर्थात् अकबर, जहाँगीर और शाहजहाँ आदि शासकों की मनोवृत्ति अमन चैन करने और यहाँ की जनता के साथ अनुकूलता, सुसंवादिता एवं घरेलू संबंध स्थापित करने की ओर विशेष उन्मुख हुई जिसके कारण उन्हें भी जनता की ओर से अनुकूल रुख और सहयोग मिलने लगा ।

सामाजिक स्थिति

किंतु यह जनता अपने में श्वपच, क्षत्रिय, वैश्य एवं ब्राह्मण के ऊँचनीच की भेद भावपूर्ण वर्णाश्रम प्रथा में जकड़ी हुई थी[1]। समाज में ब्राह्मणों-पंडितों

---

१. ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य ने शुद्र, हरिनो पिंड अखा कोण क्षुद्र ।
अखानां छप्पा · फुटकल अंग ।

की महत्ता सर्वोपरि थी[१]। वैश्य लोग व्यापार के क्षेत्र में आगे बढ़े हुए थे[२]। क्षत्रियों को अपने बल पर एवं शौर्य पर पूरा विश्वास था । ढ़ेड, भंगी आदि जातियाँ अंत्यज एवं अस्पृश्य समझी जाती थी[३]। ब्राह्मणों एवं वैश्यों में अस्पृश्यता की भावना दृढ़ता से घर की हुई थी[४] बाल विवाह प्रथा[५], सती प्रथा[६], घुंघट प्रथा[७] तथा वेश्यावृत्ति[८] भी प्रचलित थी । सामान्य जनता में अनेक अंध विश्वास भी दृढ़रूपेण जमे हुए थे । लोगोंमें ग्रहों के अनिष्टों[९] और

---

१. हरिजन मिलों हरि पाइए ब्राह्मण मिलों संसार ।
   जाकु जाकि खप आया सो तैसा करे उचार ।। ।।६।। निंदक अंग.साखी ६

२. " The Vanias correspondents in all parts of Asia and even in Constantinopal made exchange easy and advantegeous." Ahmd.Gaz. P.55 ।गु०पा०अमदा०४५१।

३.उंच वर्ण नेडे नहीं नीच वर्ण नोहे दूर
   ज्यों नर लम्बा और ठींगना कोई धूवत नहीं सूरा ।। २ ।। समदृष्टि अंग.साखी

४. आभडछोत अंत्यजनी जणी, ब्राम्हण वैश्य कीधा घणी
   बारे मास भोगवे ए बेय, शोनि घेर आवी गई रहे ।। ६ ।। छप्पा

५. नार नानडी खूं प्रसूत..... ।।१२ ।। छप्पा

६. जलने को जुवती चली, साज़ सतीका साजा ।।६।। भरोंसा अंग. साखी.

७. आंधरो ससरो ने सणगट वहु... । ६३७ ।। छप्पा

८. कहा कुलटा करे जो नवसात साजे ।। सं०प्रि०६०

९. हरिजन ने ग्रह कहो शुं करे जे ग्रह बापड़ा परवश फरे
   फाणो शुक्रने ललो शनि, बृहस्पति ए स्त्री सोई आपणी ।।२०१।।छप्पा

भूतप्रेतादि[१] के भय तथा उनके निवारण के प्रयत्न[२] किये जाते थे । अपने दैनिक व्यवहार के " पूजा पाठ, कथा वार्ता, तीर्थयात्रा, भजन कीर्तन " तथा रोज़ा-नमाज़ आदि में जनता की रुचि थी । हिन्दू मंदिरों में आरतियों के समय की घंट ध्वनियों से दिशायें निनादित हो जाती थीं । सामूहिक नमाज़ों के " अल्ला हो अकबर " की आवाजों से मुग़ल सल्तनत की कट्टर धर्म भावना भी प्रकट होती थी[३]। शासक पक्ष रमजान ईद, पैगंबर मुहम्मदका जन्म दिन और अपनी सालगिरह के त्यौहारों को जनता के साथ मनाते थे । ऐसे ही अन्य शुभ एवं महत्त्वपूर्ण अवसर पर बादशाह हाथी पर बैठ कर शहर के शाही रास्ते से जुलूसों के साथ निकलता था और अपनी ओर से रूपये भी लुटाता था । जनता हर्ष से अपने बादशाह का आदर और सत्कार करती थीं । उस समय नगर में बड़ी बड़ी खैरातों के साथ हज्ज करनेवाले को आर्थिक सहायता भी दी जाती थी । शाही अतिथिगृहों में पशु हिंसा बंद करवा दी जाती थी । कुरान की पुस्तकें बख्श की जाती थीं । मुजफ्फर द्वितीय ने कुरान की सुन्दर अक्षरों मे प्रतिलिपि कर उसकी प्रतियाँ मक्का और मदीना भेजी थीं[४]।

---

१. पशु मूवो कोई प्रेत न थाय, माणस तका अवगत्य कहेवाय ।५६१।छप्पा

२. एक मेलो मंत्री ने बीजो कुतर्क
   साधकने मुखे मूके नर्क ।।२२६ ।। छप्पा

३. दृष्टव्य: अखो - एक अध्ययन पृ०११३

४. गु० सांस्कृ०इति० खंड-३ पृ०६४९

ཉཉཉཉ जनता के मुस्लिम समाज में वर्णाश्रम-प्रथा जैसा कोई बंधन नहीं था। किंतु हिन्दू और मुस्लिम कौमों के निकट साहचर्य के कारण तथा " शाह इमाम बावा " " नुर सतागर " आदि मुस्लिम उपदेशकों के प्रभाव के कारण समाज में व्होरा, मेमण, खोजा, मोरेसलाम आदि जातियाँ अस्तित्व में आईं[1]। ये जातियाँ अपने कई धार्मिक विधि-विधानों में हिन्दुओं का भी अनुसरण करती थीं।

समाज में मादक वस्तुओं का सेवन किया जाता था[2]। जूआ खेला जाता था। पक्षिओं को पिंजड़े में रखा जाता था[3]। और शिकार भी किया जाता था। लोग आँखो पर चश्मा[5] भी पहनते थे। अंधे और काने लोग कृत्रिम आँख[6] बनवाते थे। कृत्रिम दाँत भी बनवाये जाते थे। घरों में

---

१. दीवान बहादुर कृ.मो.झवेरी लेखसंग्रह : सं.डॉ.मजमुदार.सन १९५१
लेख : मुसलमान जेवा परसंस्कार अने गुजराती साहित्य.पृ.११८

२. ज्युं मादक मखते भ्रप भया, परवश आप गमाया ।।१२।। कोम अंग साखी

३. पींजर पड्या पढे सुआ : ता पर रीझत जंत।।३।। गुलतान अंग साखी

४. लीला वृक्षने ओठे रहे, ज्यम पारधी पशु ने ग्रहे ।।६५५।
— अखाना छप्पा

५. अ. जेम चश्माना पड विषे रोधन पामे दृष्ट
तेज अधिक पोषे आंखने तेम अणलिंगी प्रत्यक्ष । अखेगीता कडवक १५।
आ. राम रतनका पारखुं, रामहि बैठा ठीक
अखा ! चश्म नतीज की दूरका सब नजीक ।।१६।। रामपरीक्षा अंग

६. अखा लखोटी डार दे जब नेनुं आया तेज ।।१३।। भोली भक्ति अंग, साखी
अ. ज्युं भोजनकाज आवे नहीं, जैसा कृत्रिम दंत ।।१४।। आत्मा अंग, साखी

बालक चिथड़ों की गुड़ियों से खेलते थे[१]। रोते बच्चों को कपड़े के झूले में गीत के साथ झूलाया जाता था[२]। बच्चे लोग गोल गोल चक्कर काटकर "फुदड़ी" का खेल भी खेलते थे[३]। स्त्रियाँ पचरंगी चोला और सोलह शृंगार सजती थी[४]। दशहरा, दीवाली और होली के पर्व आनंद उल्लास से मनाये जाते थे। और ऐसे आनंद के प्रसंगों पर "आतशबाजी[५] भी फोड़ी जाती थी और भोजन में जार बाजरे की "घूघरी" भी बनाई जाती थी[६]। संभ्रांत परिवारों में अतिथि का सत्कार उनके पैर "दूध" से धोकर किया जाता

---

१. छोकरियाँ ढिंगलियाँ खेले।
गुड़ियों को पहिनावे गहेना, जाने यह बोलेगी बैनां। जकड़ी ३१

२. बालक झोलीमें झूलावे
जूठ कहाणी हालो गावे, बुध्धिविहोणा सुणता निद्रावे। जकड़ी २५

३. फूदड़ी खाते फेर घणेरा सबको दीसे फरता फेरा। जकड़ी २५

४. अ. पचरंगी चोला मेरा रे।
आ. सब आभूषण मेरा रे, मोल सिंगारा सेरा रे। जकड़ी -१३

५. आतशबाजी ए अला, जानो सब संसार
सम्पते दिन गुजरे, फना होत नांहि वारा ।।

— तपास अंग. साखी –६

६. घूघरी मोतनकी खाई रे, जब सांई मिल्या मुज धाई रे।

— जकड़ी १०

था[१] तथा शादी-विवाह के प्रसंगों पर मिष्टान्नमें घी आदि का उपयोग होता था ।

आलोच्य युग का मुख्य उद्योग कृषि था । कुओं में से " रहेंट " के द्वारा पानी निकाल कर खेतों को पिलाया जाता था[२] । गेहूं, ईख, चावल, कपास, केल, आदि की कृषि की जाती थी[३]। तील पीलने या तेल निकालने के लिये उन दिनों आजके-से बड़े-बड़े कल-कारखाने नहीं थे । अखा की रचनाओं में " घानी " द्वारा तील पीलने के प्रचुर उल्लेख मिलते हैं । अपने सुंदर, चीकने एवं सफेद कागज की बनावट के लिए पाटण प्रसिद्ध था । वहाँ के कागज " पट्टणी कागज " के नाम से पहचाने जाते थे[५]। खंभात में अनेक प्रकार की नौकाओं और युद्ध के बड़े-बड़े जहाजों का निर्माण होता था[६]। अखा

---

१. नेरा ढोलन ढल कर आया रे, हुं दूध धोवंगी पाया रे ।
- जकडी ५, अद्याय रस

२. ऊंडो कुवो ने फाटी बोक..... ।६३७ । छप्पा

३. अ. गहुं गयो वासे जडे इक्षु जडे ज्यम कास ।
कनली गई सींगे जडे त्यम राम जडे पोता पास ।। १ ।।
-जागृतांग - साखी

आ. हूं के थोथे ज्युं ज्युं कहाड़े तब " चावल " अपना रूप देखाड़े ।
- जकडी -३९

४. अ. ममता तेली मन वृषभ माया घाणी फेर
अखा पिलाती कामना और होता जाय उमेर ।।१ ।।
-मायांग, साखी

आ. नहीं तो अटके भव विषे, ज्युं तेली बैल की रीत ।।२।। दुर्मति अंग
-साखी

५. गुजरातनी सांस्कृतिक स्थिति: व्याख्याता - अबुफ़फ़र नदवी : फा. गु. त्रैमासिक, अप्रैल -जून १९३९

६. गुजरातनुं वहाणवटु : फा.गु.त्रै. १९३५ सप्टे.

की रचनाओं में नौका के विभिन्न पारिभाषिक शब्दों एवं जल यात्रा से संबंधित अनेकश: उल्लेख मिलने के कारण ऐसा प्रतीत होता है कि अखा ने जल यात्रा भी की होंगी[१]।

अहमदाबाद, शिरोही और जामनगर में तलवार, तीर, छुरी, कटार, नेजा तथा विभिन्न प्रकार की छोटी बड़ी बंदुकें और तोपों का निर्माण होता था। उन दिनों युद्ध में " कलानाल " नामक बड़ी तोप का विशेष रूप से उपयोग किया जाता था[२]। अखा की प्रकाशित रचनाओं में " कृपानाल " मिलता है। पूरे पद के अर्थ को विचारते हुए " कृपानाल " के स्थान पर " कलानाल " ही अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है[३]। ~~उनके मूलकि~~

---

१. अ. सिंधु में चलत नाव जात कोई बंदरूं

सकल वायुको जोर ! ऐसे मैं हि संचरू ।।भजन-३, अक्षयरस

आ. जलसागर के आगुआ, मालम जाका नाम

हरिसागर आगू अखा, ज्ञानी नर अकाम ।।४।। असंत अंग -साखी

ई. दृष्टव्य : अखाना छप्पा: ३६, १५२, २२९, २४३, २५३, ७३६

२. हिन्दुस्तानमां तोप : अबुझफर नदवी,

-फा.गु.त्रै.जुलाई-सितम्बर १९३६

३. कृपानाल अंतरसे छुटी, गोला ज्ञान मिलाया ।

आड़ अटक फैल सब निकल्या, जड़ से अज्ञान उड़ाया ।।

-पद -१३ । अक्षय रस.

अखा की रचनाओं में युद्ध के जो वर्णन मिलते हैं उनसे प्रतीत होता है कि अखा ने किसी छोटे बड़े युद्ध को देखा भी हो[१]।

इन अस्त्र शस्त्र के अतिरिक्त सूती, रेशमी एवं ऊनी कपड़े के उत्पादन में भी गुजरात हिन्दुस्तान भरमें अग्रणी था। "तास गुजराती", कोतवार गुजराती", "बहादुरसाशाही रेशम" और "मुहमदी रेशम" आदि उन दिनों के प्रख्यात वस्त्र थे[२]। अखा की रचनाओं से भी "हीर" या "हीरागल"[३] दमास[४]" आदि मूल्यवान वस्त्रों के उल्लेख मिलते हैं।

दुकानें सुगंधपूर्ण इत्र [Scent] और अंजन, इलायची, लवंग, आदि मसाले तथा नील, अफीम, आदि अन्यत्र दुष्प्राप्य अनेक चीजों से भरी हुई थीं। ये वस्तुयें अरबस्तान, सिरिया, चीन, रोम, खुरासान, इराक, एबीसीनीया, ब्रिटेन, आदि विदेशों में भेजी जाती थी। विदेशों के साथ व्यापार में जैन आदि हिन्दू अग्रणी थे, व्यापार की बागडोर प्राय: इन हिन्दू व्यापारियों के हाथ में ही थी, जहाँगीर के समय सर

---

१. अ. जे जम्फमर करि जूधकूं चड़े सो साचा संग्राम
सो मारे मरे अखा ! त्यूं हरिजन कूं राम ।।८।। तपास अंग-साखी
आ. जैसा वाजा जंगका, दोउ दल सुरातन देत ।।७।। प्राप्ति अंग-साखी
इ. मरदुं के मेदान में जब नीशान गहंत
तब सूर मकलाये मरणाकुं, हीजकुं त्रास पडंत ।।१ ।।
-सूरमा अंग -साखी

२. गुजरातनी सांस्कृतिक स्थिति : अबु भफर नदवी, फा.गु.त्रै.
अप्रैल जुन, १९३६.

३. हरिवण जाण्ये खेपक काल, घोये हीर न थाये वाळ ।।८३।। छप्पा

४. ज्यम दुमास विषे बहु दीसे भात, पण पोत थकी नहीं अळवी वात
।।१७३।। छप्पा

टामस रो आया तबसे गुजरात के व्यापार में विदेशियों का भी हाथ रहने लगा ।

स्वतंत्र मुस्लिम सल्तनत के प्रारंभ से ही गुजरात के पाटण, आशावल, घोलका, अहमदाबाद, खंभात आदि बड़े-बड़े शहर उद्योग एवं व्यापार के केन्द्र थे । भृगुकच्छ, सूरत, खंभात, घोघा आदि बंदरगाहों के द्वारा विदेशों के साथ भारी व्यापार अखंडित रूपसे हुआ करता था[१]। श्री रत्नमणिराव का मत है कि जिस समय यूरोप के व्यापारियों को समुद्र का स्वामित्व भी नहीं मिला था उस समय से ही समुद्र के ऊपर गुजरात की सत्ता थी । गुजरात के ~~बबकमि~~ बादशाह " समुद्र स्वामी " कहलाते थे । यही कारण है कि अबुलफ़जल ने अहमदाबाद को " दुनिया का बाज़ार" कहा है[२]।

रोजमर्रा का व्यापार " उधार एवं रोकड़े " से होता था । देश के यातायात के साधनों में ऊँट, घोड़े एवं बैलगाड़ियों का विशेष उपयोग होता था[३]।

---

१. तुलनीय: देशे देशे किमपि कुतुकाददभुतं लोकमाना:
संपाद्यैव द्रविणमितं ~~संभ~~ भूयोप्यवाप्य ।
संयुज्यन्ते सुचिर विरहोत्कंठिताभि :सतीभि:
सौख्यं धन्या: किमपि दधते सर्वसंपत्समृद्धा: ।।
-दक्षिण भारत के वेंकटधारनू कृत " विश्वगुणादर्श चम्पू " से

२. गु॰पा॰अमदा॰ पृ॰११५

३. अ. धर्म कर्म लाग्या बहुलोक, सोदो न थयो रोकारोक
नगद माल उधारे पड्यो, एम अखा जीव ते रखड्यो ।छप्पा ५३४
आ. गाडा ल्हार लगाईंआ, हाथी हांकणहार ।
-गुलतान अंग साखी

अखा के समय कशीदाकार[1] एवं सोना चाँदी तथा लोहे का काम करनेवाले कुशल कारीगर अहमदाबाद में थे। अखा की रचनाओं से ज्ञात होता है कि उन दिनों कांच [MIRROR] पर चित्र बनाये जाते थे[2]। इतिहासकार "गेमेलि करेरी" का कहना है कि यहाँ के कारीगरों द्वारा कपड़े पर कढ़े पक्षी तथा फूलों के बेलबूटों के कीनखाब तथा रेशम की कला-कारीगरी वेनिस की कारीगरी के समकक्ष मानी जा सकती है[3]।

---

१. देववृत्यो सहु सरखा गणे, ज्यम कंचन तार त्रापडमां वणे ।। १७१

-- छप्पा ११

२. ज्युं आरसी पर चित्रर लिखा रंग रूप देखा मूल तेज गया ।

-फूलना -४५

3. " It was the head quarters of manufacturers , the greatest city in India nothing inferior to Venice for rich silk and gold stuff curiously wrought with birds and flowers."

- गु० पा० अमदा० पृ० ४५३

साहित्यिक परिस्थिति

तत्कालीन समाज में कवियों, भक्तों, उपदेशकों और कथाकारों की कमी नहीं थी । दैनिक जीवन की घटनाओंका सरस वर्णन कर लोगों का मनोरंजन करने के साथ साथ धार्मिक आख्यानों- कथाओं के द्वारा उनकी धर्मरूचि को दृढ़ करनेवाला यह वर्ग शैव, शाक्त, वैष्णव, जैन, इस्लाम आदि विभिन्न धर्म-संप्रदायों के अनुयायियों का था । समाज पलक पावड़ें बिछा कर उन सबका बड़ा आदर करता था ।

हिन्दू भक्त कवियों में नरसिंह मेहता [सं० १४७१- १५३६ वि०] और मीरांबाई [सं० १५२५-१६०३ वि.] अपनी कृष्ण भक्ति के लिए, मालण [सं० १४६०-१५७० वि०], नाकर [सं० १५५०-१६३० वि०], विश्वनाथ जानी [सं० १७०८ वि० में विद्यमान] और प्रेमानंद [सं० १७०१-१७७५ वि०] अपने विभिन्न भाव रसपूर्ण पौराणिक आख्यानों और कथाओं के लिए तथा शामल भट्ट [सं० १७५६-१८०६ वि०] अपनी " सिंहासन बत्तीशी " आदि मनोरंजक सामाजिक वार्ताओं के लिए विशेष लोकप्रिय थे । मांड़ण बंधारा [सं० १५५६ वि० में विद्यमान], धनराज [विक्रम के १७ वें शतक का पूर्वार्ध], भगवानदास कायस्थ [सं० १६८१-१७४६ वि०], नरहरि [सं० १६७२-१६६६ वि०], गोपाल [सं० १७०५ में विद्यमान] आदि संत कवि अपने अद्वैत मत एवं आत्म-ज्ञानपूर्ण रचनाओं के कारण जनता के समादर के पात्र थे ।

जैन साहित्यकारों में विशेषकर सिंहकुशल [विक्रम की १६ वीं शती], विनयसमुद्र [विक्रम की १६ वीं शती], कुशललाभ [विक्रम की १६ वीं शती],

हीरकलश [विक्रम की १६ वीं शती], हेमानंद [विक्रम की १६ वीं शती], वच्छराज [विक्रम की १६ वीं शती], मतिसार [विक्रम की १७ वीं शती], नयनसुंदर [विक्रम की १७ वीं शती], लावण्य समय [विक्रमकी १७ वीं शती], नेमिविजय [विक्रम की १७ वीं शती का उत्तरार्ध] आदि क्रमश: अपनी नंदबत्रीसी, आराम शोभा, माधवानल कामकंदला, सिंहासन बत्तीसी, वैताल-पंचविंशति रास, पंचोपख्यान, कर्पूरमंजरी, नलदमयंती रास, रावण मंदोदरी-संवाद और विमल प्रबंध, शीलवती रास आदि विभिन्न विषय-वस्तु एवं भाव-रसपूर्ण अनेकविध रचनाओं के कारण जनता के श्रेय थे । ये साधु-कवि अपने रासो, चरित एवं प्रबंध ग्रंथों के द्वारा स्वधर्मावलंबी समाज में संतोष और क्षमा की भावना का संपोषण करते थे ।

मुस्लिम संत औलियों में शेख एहमद खटुगंज, शाह आलम साहब तथा उनके शिष्य-प्रशिष्य: मियां शेख मुहम्मद चिश्ती, खुनतरा बीबी, मियां गेबनशाह, सैयद जलाल बुखारी, सैयद जाफर बादरे, क़ाज़ी मुहम्मद दरियाई आदि विशेष उल्लेखनीय हैं । कई संत- ओलिये शाही परिवारों एवं दरबारों से भी संबंधित थे । स्वयं बादशाह और उनके सूबेदार इन दर्वेशों के दर्शन के लिए जाते थे और इनके रोज़े एवं मकबरों को विपुल धन राशि से दुरुस्त भी करवाते थे । सैयद जाफर बादरे अपने " रोफाते शाही " नामक ग्रंथ के लिए प्रसिद्ध है । प्रस्तुत ग्रंथ २४ खंडों में विभाजित है जिसमें संतों-औलियों के वर्णन के साथ " कुरान " की टीका भी है । काज़ी मुहम्मद " दरियाई " की अप्रकाशित हिन्दी रचनायें गु०वि०सभा, अहमदाबाद की ह०लि०पोथी

सं॰२७८३ में सुरक्षित है । अन्य संतों की बानियों के फुटकल उदाहरण "मिराते एहमदी" में दिये गये हैं[१]। इन सूफी एवं संत कवियों के अतिरिक्त जिन्हें हम "विशुद्ध साहित्यकार" कह सके ऐसे लेखकों में हिन्दी के सुप्रसिद्ध संत कवि अब्दुल रहीम खान खाना "रहीम" का संबंध गुजरात से भी था । खान खाना साहब अकबर के साथ आने के अतिरिक्त सूबेदार के रूपमें भी गुजरात में काफी समय [सन् १५८८ ई॰] तक रह चुके थे । उनको पूरा पाटण जिला जागीर के रूपमें दिया गया था । उनके समय अनेक कवि- लेखक ईरान से आकर अहमदाबाद में बस गये थे[२]। गुजरात का प्रख्यात मुस्लिम कवि "नफीर" अपने जीवन के अंतिम वर्षों में अहमदाबाद में ही रहता था और सन् १६१२ ई॰में अहमदाबाद में ही चल बसा । "नफीर" की लिखी "गज़लें" गुजरात में आज भी गाई जाती है । राहुल सांकृत्यायन ने अपनी "दक्खिनी काव्य धारा" में जिस "वली" को दक्खन का कवि माना है वह "वली" जन्म से गुजराती ही था और यहाँ के अपने समय के प्रसिद्ध कवियों में से एक था । अहमदनगर का राज्य कवि "फहूरी" तथा अकबर का राज कवि "फैयजी" की भेंट हुआ करती थी । "फैयजी" दो तीन बार गुजरात में आ चुका था । वह "फहूरी" का बड़ा प्रशंसक भी था । "फहूरी" वि॰सं॰१०२५ में चल बसा ।

उपर्युक्त उल्लिखित, हिन्दू भक्त एवं ज्ञानी कवियों, जैन साधु-साहित्यकारों एवं मुस्लिम सूफी संत कवियों द्वारा संवर्धित साहित्य के

---

१. मिराते एहमदी भाग-२. अनुवादक :काजी मोहम्मद निज़ामुद्दीन फारूकी सन १९१९. प्रकरण २

२. फारसी साहित्यनो इतिहास : एम॰एफ॰लोखंडवाला, सन् १९४८ पृ॰१९५ से २०२

काव्य रूपों में पद, आख्यान, गरबा -गरबी, आरती, बारह मासा, वार, तिथि, रास, प्रबंध, फागु, चरित, विवाहलु, पवाड़ा, वार्ता, गज़ल, मसनवी, रेखता, आदि का विकास हुआ देखा जा सकता है। इन रचनाओं में ध्रुपद, गुजरी, सरस्वती, चहूल, छप्पय, कुंडलिया, झूलना, सवैया, कवित्त, प्लवंगम, चोखारा, चोपाई आदि विविध छंदोंका भी प्रयोग हुआ है।

मुस्लिम साहित्य एवं संस्कृति के प्रभाव स्वरूप हिन्दू एवं जैन कवियों की रचनाओं में अरबी, फारसी शब्दों एवं विशेषत: सूफी भाव-धारा का व्यवहार हुआ देखा जा सकता है। पद्मनाभ रचित "कान्हड़दे प्रबंध" [सं० १५२५ वि०][१] में तथा संत समर्थदास, संत माधवदास, मांड़ण भवैया तथा अखा आदि साहित्यकारों की रचनाओं में विदेशी प्रभाव विपुल रूप में दृष्टिगोचर होता है[२]।

आलोच्य युग में गद्य का भी विकास हुआ दृष्टिगोचर होता है। यह गद्य संस्कृत एवं तत्कालीन गुजराती भाषा में लिखा गया है। जैन साधु साहित्यकारों में मेरुतुंगाचार्य कृत "प्रबंध चिंतामणि" [सं० १३६६ वि०] राजशेखर कृत "प्रबंध कोश" [सं० १४०५ वि०] आदि संस्कृत गद्य के प्रमुख ग्रंथ है। अपनी महानता से अकबर को प्रभावित करनेवाले श्री हीरविजयसूरि के जीवन कार्य पर संस्कृत में रचित "हीर सौभाग्य" महा काव्य गुजरात के सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। गुजराती गद्य ग्रंथों में

---

१. गु० सा० ना मार्ग द० अने वधु .मा० सू० स्तंभो. पृ० ५५.

२. दृष्टव्य : प्रस्तुत प्रबंध का "भाषा अध्याय"।

संग्रामसिंह कृत " बाल शिक्षा ", कुलमंडन गणि कृत " मुग्धावबोध औक्तिक " विशेष उल्लेखनीय है। जैनेतर साहित्यकारों द्वारा रचित गद्य ग्रंथों में पांडव गीता, विष्णु सहस्त्र नाम, गीत गोविंद, वेताल पचीसी एवं अखा कृत चतु:श्लोकी भागवत का उल्लेख किया जा सकता है। शाही कचहरियों के काम काज में संस्कृत, उर्दू और गुजराती भाषाओं के मिश्रण से बना विलक्षण गद्य व्यवहृत होता था। इन सब के साथ साथ अध्ययन शील वर्ग भाषा और व्याकरण, साहित्य और पिंगल तथा दर्शन के विभिन्न मत मतांतरों के अध्ययन - अध्यापन एवं लेखन संपादन[१] में रत था।

साहित्यिक प्रवृत्तियों के प्रस्तुत विहंगावलोकन के आधार पर विश्वस्त हो कर यह कहा जा सकता है कि यह युग साहित्य सर्जना की दृष्टि से अंधकारपूर्ण न होकर समृद्ध था।

संगीत तथा आनंदप्रमोद के साधन

आलोच्य युग में " संगीत " का अपने सही अर्थ - गायन, वादन एवं नर्तन में विकास हुआ दृष्टिगोचर होता है। गुजरात का सुप्रसिद्ध गायक " मंजु " अथवा " बैजु " देशी और फारसी गायकियों का परम ज्ञाता था। गुजरात के सांस्कृतिक इतिहास के विद्वान लेखक रत्नमणिराव ने अपने ग्रंथ में बताया है कि " बैजु " अपने सुंदर गायन के कारण ही हुमायुं द्वारा की गई हुई कत्ल से बच गया था[२]। हिन्दूओं मे जैन गायन पद्धति

---

१. अ. अष्टावधानी पिंगल कवि... छप्पा ३६७
आ. दृष्टव्यः अक्षय रस, साखी विभाग वेश, आत्मज्ञान सद्गुरु अंग।
२. गु. सांस्कृ. इति. खंड ३ पृ. ७३६ से ७४३

प्रसिद्ध[1] थी । गायन के साथ वाद्यों में रबाब, चतरी, मौऊर, चतुर वाद्य, सर, मंडल आदि विशेष रूप से प्रचलित थे । बादशाह मुहम्मद बेगड़ा रबाब का बड़ा शौकीन था । और उसके लिये यह वाद्य विशेष रूप से तैयार किया गया था[2]। अखा ने अपने गान को " रबाब " के गान की उपमा देकर अपने " रबाब " को छेड़ने वाले को " अरूपिया ब्रह्म " बताया है ।[3]

उन दिनों हिन्दुओं में " सरस्वती नृत्य " प्रचलित था । एक बार बादशाह मुजफ्फर दूसरे ने शहर के बड़े-बड़े स्वर्ण ~~देकर~~ कारों को सोना और रत्न देकर " हंस-सरस्वती का वाहन बनवाकर " सरस्वती नृत्य " का आयोजन किया था । तवारीखकारों का कहना है कि नृत्य इतना उत्तम था कि प्रेक्षकजन नर्तकी को ही देवी सरस्वती समझ बैठे थे ।[4] आनंद प्रमोद के इन साधनों के अतिरिक्त सामान्य जनता में नटों,[5] बाजीगरों,[6] मल्ल,[7] तथा

---

1. " The Jains (of Ahmedabad) were only the natives of Hindustan who possess .. notes for music and it is among this class that the most valuable numismatical relics will be discovered."

-गु॰पा॰अमदा॰पृ॰४७६

२. फा॰गु॰त्रैमासिक, १९३६. अप्रैल-जुन में. " गुजरातनी सांस्कृतिक स्थिति " लेख : अबु ज़फर नदवी.

३. जैसा गान रबाब का ऐसा बोलन मोंजे
बाजा छोड़त अरूपिआ ना अखा ते होय ।।३०।। कृपांग, साखी

४. गु॰ सांस्कृ॰इति॰खंड-३ पृ॰६५४-५५

५. नट ज्युं स्वांग लावे सबे, सो बोली बोले चाल । ।७। समस्यांग,साखी

६. गेहरी आतुरता अखा अेकु पेडेमें वैकुंठ ।।
ज्युं बाजीगर का उडणा जीवण की नहीं मूठ ।।३६ ।। कृपांग, साखी

७. वारी जाउ रंग बजाणियाा, तें तो भला भजाव्यो भेरव । पद -१३१
– अखानी वाणी सं. २००६

तथा भवाई के खेल,[१] नाटक[२] आदि भी प्रचलित थे ।

इस प्रकार हमने देखा कि शासक वर्ग की ओर से गुजरात की जनता को अपनी सामाजिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक एवं साहित्यिक प्रवृत्तियों एवं उन्नति के मार्ग में कोई बाधा नहीं पहुँचाई जाती थी । हाँ, इतना अवश्य था कि विधर्मी शासकों के धर्म जनून से बचने के लिए हिन्दू जनता अपने धर्म को विशेष कट्टरता से चिपक रहने का प्रयत्न करती थीं । तथापि मुसलमानों के एकेश्वरवाद एवं सूफीवाद के हमारे अद्वैतवाद एवं प्रेम-लक्षणा भक्ति से मिलते जुलते होने के कारण[३] उभय जातियों में एक दूसरे के धर्म को कुतूहल एवं सहिष्णुता की दृष्टि से देखने समझने की और एक दूसरे के निकट आने की भावना बलवती थीं । अकबर और जहाँगीर के सिक्कों पर टंकित राम-सिता, सूर्य, ज्योतिष की राशियों के चित्रों से उन विधर्मी शासकों की धर्म-सहिष्णुता का स्पष्ट बोध होता है ।[४]

---

१. भांड भवाया भामिनी, त्यहां ते रातो थाय।
गुण सुणतां गोविंदना ऊंघे के उठी जाय ।। १३।। अधम अंग-- साखी

२. सदा सर्वदा नाटक माया, नाटय चले देखे परब्रह्म राया ।
- चोखारा -पृ : ब्रह्मलीला, अक्षयरस पृ.८६

३. द्रष्टव्य: Sufism and Vedanta-By Dr.Rama Chaudhuri,Part I Calcutta;1945.

४. मुसलमानी सिक्काओ उपरनां चित्रो : लेखक बेचरलाल दोशी
-फा.गु.स.त्रैमासिक अप्रील -जून सन् १९३८ ई. ।

उस समय के प्रचलित धर्मों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है। [१] वैदिक, [२] अवैदिक और [३] इस्लाम। वैदिक धर्मों में [अ] शैव [आ] शाक्त एवं [इ] वैष्णव धर्म की तथा अवैदिक धर्मों में [अ] जैन एवं [आ] बौद्ध धर्म की गणना की जा सकती है। इस्लाम धर्म इन दोनों परंपराओं से नितांत भिन्न है। यहाँ क्रमश: इन सब का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत कर अखा के समय में उपलब्ध इन सब की प्रवृत्तियों का परीक्षण किया जाएगा।

अ. शैव धर्म

१६ वीं शती के कवि भालण की रचनाओं " शिव भिलडी संवाद " और " मृगी आख्यान " से उस समय में "कैलासपति शंकर" की उपासना के प्रचलित होने के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। भालण का " शिव भिलडी संवाद " काव्य गुजरात का शायद प्रथम " शिव भक्ति प्रेरक काव्य है। भालण के पश्चात् के कवियों में जायड़ ने " मृगी संवाद " तथा नाकर ने " शिव विवाह " और " व्याध मृगली संवाद " काव्यों की रचना की। सं० १६०५ वि० में विद्यमान कवि मुरारी की भी शिव भक्ति प्रेरक " ईश्वर विवाह " नामक एक रचना उपलब्ध है। अखा की रचनाओं से भी प्रस्तुत संप्रदाय के प्रचार की सूचना मिलती है।[१]

आ. शाक्त धर्म

यद्यपि आरासूर और गिरनार, आबू, पावागढ़, बहुचराजी आदि बड़ी-बड़ी शक्ति पीठों का अस्तित्व अखा के समय तक आते आते नष्ट अवश्य हो गया था।

१. द्रष्टव्य : अखानां छप्पा,

तथापि " श्रीधर " और " भालण " के "सप्तशती " के अनुवाद " कीर्तिमेरू " कृत अंबिका-छंद [सं० १४८१ वि०] तथा सत्रहवीं शती में रचित " भवानी-छंद " आदि के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आलोच्य युग खंड में शाक्त धर्म का प्रचार था और विभिन्न देवियों की पूजा, आराधना, उपासनादि अवश्य की जाती थी । अखा की रचनाओं से भी देवी पूजा के प्रचार की सूचना मिलती है [1]।

छ. वैष्णव धर्म

अखा के समय तक गुजरात में प्रचलित वैष्णव धर्म की दो शाखायें प्रमुख रूप में देखी जाती हैं [१] राम भक्ति शाखा और [२] कृष्ण भक्ति शाखा । " रामानुज " संप्रदाय द्वारा प्रचारित राम भक्ति से प्रभावित साहित्य १५ वीं शती से दृष्टिगोचर होता है । सं० १४२७ वि० में विद्यमान कवि " असाइत " रचित राम भक्ति के पद मिलते हैं [2]। भालण ने रामचंद्र की बाल-लीला के पदों में कहीं कहीं अपने को राम भक्त भी बताया है [3]। मांडण बंधारा द्वारा रचित " रामायण [4] " तो प्रसिद्ध ही है । सं० १५८७ में विद्यमान भक्त कवि " मीठा " रचित " वैष्णवनां लक्षणो [5] " में एतद्विषयक उल्लेख मिलते हैं । संत अखा की संतप्रिया में भी रामचंद्रजी द्वारा भीलनी - शबरी के बेर भक्षण [6]

१ देव ना देवी आराध्य, पिंगल ना व्याकर्ण साध्य ।।११६ । संतप्रिया

२. दृष्टव्य : कवि चरित. पृ० ५

३. वही. १६६

४. गु० सा० ना मा० स्० अने व० मा० स्० स्तं० पृ० ६४

५. वै० ध० नो इति० पृ० ४२५

६. भीली के बेर जुठे भखे भावसुं तो काहा लज्जा लगी रघुनंदन कुं ।। २२ ।।
-सं० प्रि०

हनुमान के लंका गमन और सीता की खोज के स्पष्ट उल्लेख मिलते हैं। राम -भक्ति के इतने उदाहरण मिलने के बावजूद यह कहा जा सकता है कि " कृष्ण-भक्ति " के प्रचार, प्रसार एवं प्रभाव की तुलना में गुजरात में रामभक्ति का पौधा छोटा ही रहा।

गुजरात की कृष्णभक्ति के संप्रदायों में " चैतन्य मत " और "वल्लभ-मत " विशेष उल्लेखनीय हैं। गुजरात में जहाँ तक चैतन्य की भक्ति के प्रभाव का प्रश्न है, यह एक मान्यता थी कि नरसिंह मेहता [सं० १४५१-१५८२ वि०] की भक्ति चैतन्य महाप्रभु के संस्पर्श से ही स्फुरित हुई थी। किंतु गुजरात में विष्णु-भक्ति की परंपरा के जो प्रचुर प्रमाण उपलब्ध हुए हैं उनसे इस मान्यता का प्रत्याख्यान हो जाता है। चैचन्य ने सं० १५६६ वि० के आसपास गुजरात की यात्रा की थी। इस यात्रा में उन्होंने अपनी " कृष्ण दर्शन की तीव्र अभिलाषा, अनन्यता एवं मधुर भक्ति-विह्वलता से प्राय: पूरे गुजरात को अपनी ओर आकर्षित अवश्य किया किंतु स्वयं वल्लभाचार्यजी, विट्ठलनाथजी, गोकुलनाथजी आदि आचार्यों की अनेक धर्म यात्राओं, उनके वक्तव्यों तथा उनके द्वारा निर्दिष्ट भक्ति पद्धति के कारण चैतन्य भक्ति की अपेक्षा वल्लभ संप्रदाय ने ही गुजरात को सर्वाधिक प्रभावित किया।

श्री वल्लभाचार्यजी विजयनगर, बनारस आदि प्रसिद्ध स्थानों में बड़ी -बड़ी सभाओं का संचालन कर अगाध विद्वत्ता के बल से अपने मत का प्रचार-प्रसार करते हुए गुजरात की ओर आये। सूरत, भरूच, मोरबी, नवानगर, खंभालिया,

---

१..... कुधा हनु पर लंक जा आयो ।।
सीता की सुध्ध लीनी लंक जारी, तोहु तेल कछोटा से बाढ़ न पायो ।।
राम सो दानी हनु सो प्राक्रम रीझकी ठौर मुख श्याम करायो ।। १३७ ।।
- सं० प्रि०

पिंडतार, डाकोर, द्वारका, जूनागढ़, प्रभास, नरोडा, गोधरा आदि स्थानों की वारंवार यात्रा कर गुजरात में अपनी विद्वत्ता की धाक ही नहीं जमाई किंतु कई जिज्ञासुओं को " भागवत दीक्षा " भी दी। ऐसे " ब्रह्म संबंध " प्राप्त गुजरात के वैष्णवों में चरोतर [गुजरात] के पटेल श्री कृष्णदास [सं० १५६२ वि० में विद्यमान] अग्रगण्य हैं। वल्लभाचार्यजी ने कृष्णदास का व्यवहार-कौशल देखकर उन्हें श्रीनाथजी के मंदिर में " मुख्य अधिकारी " के रूप में नियुक्त किया। ये कृष्णदासजी व्रज भाषा साहित्य के " अष्टछाप महानुभावों " में भी चतुर्थ स्थान के अधिकारी हुए। श्री वल्लभाचार्यजी के, हिन्दू दर्शन के अनुसार जीवन के अंतिम दिनों में सन्यास धारण कर सं० १५८७ वि० में दिवंगत हो जाने के पश्चात् श्री विट्ठलनाथजी ने अपने पिता के मत को संप्रदाय का रूप देकर " शरण मंत्रोपदेश " और " आत्म निवेदन " के सिद्धांतों को अपने संप्रदाय के स्तंभ रूप बनाया। वे अपने संप्रदाय के प्रचारार्थ जब गुजरात में आए तब आसारवा में अपने शिष्य " भाईला कोठारी " के यहाँ ठहरे और अपना खाया हुआ जूठा पान भाइला कोठारी के जामाता " गोपालदास " के मुख में रखकर उन्हें मुखरित किया। ये " गोपालदास " प्रस्तुत संप्रदाय के " बड़े कवि " के नाम से प्रसिद्ध हुए। सं० १६४२ वि० में श्री विट्ठलनाथजी की मृत्यु के पश्चात् उनके चतुर्थ पुत्र " श्री गोकुलनाथजी " प्रस्तुत संप्रदाय के गादीपति हुए। अतः अपना " गलिया बैल " - मन इन्हीं

गोकुलनाथजी के पास नथवाने को गये थे[1]। गोकुलनाथजी भी अनेकबार गुजरात में आ चुके थे ।

उपर्युक्त ~~उल्लिखित~~ वैष्णव संप्रदायों की तरह जैन धर्म भी गुजरात के प्रचलित धर्मों में विशेष अग्रणी था । अपनी विद्वत्ता एवं वक्तव्य से सम्राट अकबर को प्रभावित करनेवाले गुजरात के जैन साधु कवि श्री " हीरविजयसूरि " के समय से प्रस्तुत धर्म का विशेष विस्तार हुआ । सम्राट अकबर ने श्रीहीरविजय-सूरि की महानता से प्रभावित होकर सारे देश में अहिंसा पालन करने के फरमान भी निकाले । इस प्रकार साम्राज्य की ओर से संरक्षण मिलने के कारण वैष्णव धर्म की अपेक्षा गुजरात में इसका कहीं अधिक प्रभाव पड़ा । किंतु गुजराती भाषा और साहित्य का महत्त्वपूर्ण एवं विपुल संवर्धन करने-वाले प्रस्तुत धर्म के अनुयायियों द्वारा केवल परंपरागत आचारों एवं विधि-विधानों के जड़वत् पालन के विरूद्ध आवाज़ उठाई गई । यह आवाज़ उठाने-वालों में अहमदाबाद के "लोकाशाह"[3] [विक्रम की १६ वीं का उत्तरार्ध एवं १७ वीं का पूर्वार्ध] का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है । इस जैन साधु ने मूर्तिपूजा एवं बाह्याचारों के गतानुगतिक निर्वाह से धर्म के मूल तत्त्वों की अवमानना होती देखकर " प्रतिमा पूजन का निषेध " किया[2]। उस निषेध का अन्य कई जैनियों ने अनुमोदन किया अत: इस प्रवृत्ति को इतना बल मिला कि अमूर्ति पूजकों का यह संप्रदाय दिनों दिन बढ़ने लगा और उसका प्रचार गुजरात से काठियावाड़, मारवाड़, मालवा, पंजाब आदि स्थानों में भी

---

१ गुरु कर्या में गोकुलनाथ, मालिया वल्लभने धाली नाथ,
मन मनावी समुरो थयो, पण विचार नमुलानो रह्यो —
अखो अेक अध्ययन पृ० ३९

२. जैनो अने तेमनुं साहित्य, मोहनलाल दलीचंद देसाई,
भ०सा०प्र० में लेख, पृ० ३३

३. 'उत्तर भारत की संत परंपरा', परशुराम चतुर्वेदी, सं० २०२१, पृ.२४८

हुआ । ये पंथ " ढुंढ़ीया - स्थानकवासी " के नाम से आज भी प्रवृत्तिशील है ।

अखा के समय में बौद्ध धर्म के प्रचार एवं प्रसार के कोई विशेष उल्लेख या स्मारक नहीं पाये जाते । बौद्धों के शून्यवाद के खण्डन की जो प्रवृत्ति[१] अखा की रचनाओं में पाई जाती है । लगता है अखा ने देश में फैले षाड्दर्शनों के वर्णन- खंडन के साथ साथ एक महत्त्वपूर्ण धर्म होने के कारण इसे भी अपनी परीक्षा का साधन बनाया । अर्थात् इन उल्लेखों से गुजरात में बौद्ध धर्म के प्रचार - प्रसार के कोई विशेष सूत्र नहीं संजोये जा सकते ।

इस्लाम धर्म

अध्ययन की सुकरता के कारण, अखा के समय में प्रचलित इस्लाम धर्म को दो रूपों में रख कर देखा जा सकता है - [१] शाही और [२] आम । धर्म के शाही रूप से मतलब है शासक बादशाह या सूबेदार और उनके मुस्लिम दरबारियों द्वारा पालित " कुरान - शरीफ " में प्रतिपादित मूल धर्म । इस मूल धर्म के प्रचार में शासक पक्ष की ओर से ज़ोर ज़ुल्म किये जाने के कारण तथा उसके ग्रंथों की भाषा विदेशी होने के कारण यह धर्म यहाँ की जनता द्वारा स्वीकृत नहीं किया गया । किंतु इस्लाम के उपदेशकों का एक वर्ग ऐसा भी था जो हिन्दू धर्म की परंपराओं से परिचय प्राप्त कर यहाँ की जनता के साथ सहानुभूति भी रखता था । यह मत सूफी मत के ओलियों का था । हिन्दू जनता उपदेशकों, फकीरों एवं ओलियों के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति भावना

अ. अखे गीता: कडवक २६ : संपा. प्रो. मधूसूदन त्रिवेदी, सन् १९५४, पृ. ३४ से ३६
आ. अखाना छप्पा : दुशविधध्यानी अंग, पृ. १७० से १७२.

रखती थी[१]। ऐसे उपदेशकों में शेख एहमद खटु, कुतुब आलम साहब, शाह आलम साहब आदि का जिक्र पिछले पृष्ठों में किया जा चुका है।

नानाविध साधना-पद्धतियाँ

विवेचित प्रमुख धर्म-संप्रदायों के अतिरिक्त अखा के समय नानाविध साधनायें[२] भी प्रचलित थीं। रस और रसायण करनेवाले, गुटिका देनेवाले, ध्यान धरनेवाले तथा यौगिक क्रियाओं के द्वारा जनता को अपनी ओर उन्मुख

---

१. गुजराती पर अरबी- फारसीनी असर भाग२ : डॉ॰ छोटुभाई नायक
गुजरात विद्या सभा, अहमदाबाद, सन्१९५५, पृ॰ ५४५ से ५५०

२. अ. ना मोहि बनज व्यापार उपासन, ना मोहि मंत्र गुरू नहीं चेरा
ना मोहि रस रसायण आवत ना गोटका अंजन देव देरा । सं॰प्रि॰ ९४

आ. सिद्ध साधक साधे पुनि काया, गुन के पार न जावे । पद-१ अप्रप्र रस.

इ. नादी वादी गुणि गवैया कवि कला रस केहता
वंचक पूजक सेवक साधक, कोई नहीं ब्रह्मवेत्ता । पद-२ वही, पृ- ९३

ई. को कहे हुं देखुं पचरंग, को शेषशायी देखे सुचंग
कोने मुक्ताफळ दृष्ट पडे, को कहे मारे ज्योति झळहळे । ४०८ अखाना छप्पा

उ. ध्याने दीसे ते जाम्ये जाय, तो खोटानो शुं करे उपाय ?
इन्द्रजाल विद्यामां कां मुहे ? ए कर्तव्य छोकरडां जुवे ? ४१० अखाना छप्पा.

ऊ. कोऊ कहे साधिये योग, कोउ कहे कीजिये भोग ।
- सं॰प्रि॰ ११५

ए. ध्यान धरके हुं कोन कुं निहारू, जो प्रगट खेल को आप खेलैया ।
- सं॰प्रि॰९१

किये रहनेवाले ज्ञानदग्ध एवं हठज्ञानी लोग भी थे । अखा ने स्वानुभव के बल पर इन सब पद्धतियों एवं उनके प्रयोगकर्ताओं की नाना शब्द वाणी को मिथ्या बता कर " आत्म पहिचान " करने की बात कही है[१]। दंडी मुंडी और वैराग्य के उपदेशकों को भी अखा ने नहीं छोड़ा[२]।

अखा की रचनाओं के गहरे अध्ययन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन सभी धर्म - पंथ - संप्रदाय " सत्य तत्त्व " को भूल गये थे[३]।

---

१. नाना वाणी मत सुणो, शब्द जाल बहु भात
लाग लाग बिखरे अखा, जैसे रूई तांत ।। ४।। सर्वांग अंग, साखी
जगत घाट बैठे नहीं नाना भात बहुवाण
खट दर्शन मत बहु अखा, एक एक तें अधिक सयान ।।६।। सर्वांग अंग, साखी

२. अ. मुंड मुंडावी हरिने काज लोक पूजे ने कहे महाराज
मन जाणे हरिए कृपा करी, मायामां लपटाणों फरी । ६५१। छप्पा
आ. जे वैराग्य देखाडे करी, ए तो मन केरी मश्करी
पलके पलके पलटे ढंग, ए तो अखा मायाना रंग ।।२६।। छप्पा.

३. अ. पक्षज्ञानी ओछोतुं अखा लक्षज्ञानी को एक
ज्युं देखणहारा एक है, दर्पण रूप अनेक ।।२।। कुमति अंग -साखी
आ. जीत तणी छे अवळी समझ, धाये धूपे के पाटल पूज
ब्राह्म कर्म करी गूंचवाय, मत दर्शनना मळ बंधाय ।
अखा धोवो छे अहंता काट ते तां भीडूयां कर्म कपाट ।।३८२।। छप्पा

लोग प्राय: विभिन्न धर्म दर्शन के खंडन मंडन एवं वाद विवाद में ही रत रहते थे[१]। अपने अपने मत पंथ के ब्राह्म एवं रूढ़ आचारों और व्यर्थाडम्बरों का ही कट्टरता से पालन- पोषण किया जा रहा था क्यों कि पूरा समाज बहुदेववाद में फँसा हुआ था[२]। शैव मतानुयायी अपने शिव को, शाक्त पंथी अपनी भवानी को और वैष्णव अपने विष्णु को एक दूसरे देव की अपेक्षा बड़ा समझते थे[३]। शैव और शाक्त मत की अपेक्षा उन दिनों वैष्णव मत का विशेष प्रचार होने के कारण वैष्णवों में व्याप्त ब्राह्माचारों का अखा ने खुलकर

१अ. खट दर्शन खटपट करे तर्कवाद तकरीर

अदबदकी और अखा ज्युं लावा लवत कुटीर ।।१६।। अदबद अंग -साखी

आ. खट दर्शनना जुजवा मता, मांहो मांही खाधी खता

एकानुं थाप्युं बीजो हणे, अन्यथी आपने अधिको गणे ।। ३।। अखाना छप्पा

२. अ. जोग जाग तप दप दया अखा सब उझली बात ।।१३।। महाविचार अंग -साखी

आ. अळगां उपासन अठगा देव करे हिमात्य बाधे अहमेव

अखा ए मोटो उत्पात, घणा परमेश्वर ए क्यांनी वात १ ।३८५।छप्पा

३. को कहे मोटो शिव देव, को कहे विष्णु मोटो अवश्यमेव

को कहे आद्य भवानी सदा बुद्ध कल्पिना करे वायदा ।।३८७।। छप्पा

वर्णन किया है। अखा स्वयं जन्मना वैष्णव थे किंतु वे शुद्ध वैष्णव एवं आत्म निमग्न थे। अत: भेष धारी वैष्णवों[1] और मिथ्या गुरूओं[2] के प्रति अखा को सख्त नफरत थी। कवि ने सगुणावलंबियों के नर्तन, कीर्तनादि मिथ्या आचारों की खिल्ली उड़ाई है[3] तथा राम के स्थान पर रामा की भक्ति करने –

---

१. वैष्णव भेख धारी ने फरे, प्रसाद टाणे पतरावळ भरे
राँध्या धान वखाणता जाय, जेम पीरसे तेम फाफा खाय
कीर्तन गाईने तोडे तोड अखा कहे जुवानीनुं जोर ।६६३। छप्पा

२. अ. आत्म अनुभव बिन अखा, शिष्य कीन्हो संसार
ज्युं भिक्षुकुं परजा भई, मांग मांग करे आहार ।। २६ ।।
– आत्म अंग, साखी.

आ. गुरू पूरा नहीं ज्ञान बिना शिष्य खाली विश्वास
दुहूंस चली संसारमें गुरू शिष्य स्वामी दास ।। ७ ।।
–शिष्य आतुरता अंग – साखी

इ. गुरू थई बेठो होंसे करी कठे पाण शके केम तरी
शिष्यने भारे भारे रह्यो अखा ते मूलगेथो गयो ।। १२ साहित्यकार अखो पृ०१३
पोते हरि नौ जाणे लेश काढी बेठो गुरूनो वेश
सापने घेर साप परोणो साप मुख चाटी चाल्यो घेर आप ।
एवा गुरू घणा संसार ते अखा शुं मुके भव पार ।। १३।। वही, पृ०१३

३. अ. नाचत गावत थें राम न रीझत, राम नहीं पानी पाहांन मेलवना ।।
– सं. प्रि. २०६।

आ. नवते गातें हरि मिले तो मांड डुंब तरी जाय
प्रेम सदगुरू सेव्या बिना हाटे हाट बेचाय ।। १४ ।।
– लक्षहीण अंग । साखी

वाले[१] और धन, तन, और मन की उपासना को जगदीश - परब्रह्म की उपासना[२] समझने वालों का ~~अनुभव~~ तिक्त भाषा में वर्णन किया है।

अखा के अतिरिक्त उनके पूर्ववर्ती और परवर्ती संत-भक्त कवियों की रचनाओं में भी वैष्णवों की बहिर्गामिता के प्रचुर वर्णन मिलते हैं। अखा के पूर्ववर्ती, गाँव तलाजा के कवि मीठु [सं०१५८७ वि०] ने अपनी " वैष्णवोनां लक्षणो " नामक रचना में वैष्णवों की स्वच्छन्दता और धार्मिक गतानुगतिकता का ही नहीं वरन उनके " परनारी गमन " तक का स्पष्ट उल्लेख किया है[३]।

१.अ. राम कीं ठोर चाप रंग राच्यो ज्यों स्वानसुनी की रे ही लग्यो रे ।१३।
-सं०प्रि०

आ. रे मन राम भजन की ठोरतें भजी रंग रंगीली सी रामा ।।१५ ।।सं०प्रि०

२. धन तन मन उपासे सबे कोउ जानत है जगदीश अराधे ।
एठी सी चाल्य एठो सो आराधन, एठे से बोल बोले जू अलाधे ।
आत्म ज्ञान नहीं गुरू की गम,भ्रांत्य ही क्षोत सारे दिन साधे
ठाकुर को ठहराव न पायो माया ने अखो कहे खेलावत खावे ।।५० ।।
- सं०प्रि०

३. सांभलि सांमी श्रीरघुनाथ करूं बीनती जोडी हाथ ।
कहई विष्णव नई आप छिंदिई रमइ कहुं रामने किम गयई ?
मति मईलुं मायामुखि धरई वीसारी पर नई छेतरई
संप्या द्रोह ऊपरि जे ममई, कहुं रामने ते किम गमई ?
विष्णुकथा गुण गाई गीत उंबरि हीयडुं पडल कुचित्ति
नारी पीयारी सरिस रमइ, कहुं रामने ते किम गमई ?
- वैष्णव धर्मनो इतिहास : दुर्गाशंकर शास्त्री, पृ०४१५

अखा के परवर्ती कवि शामल ने भी वैष्णवों और गोसाइयों के विलास उत्सवों के साथ साथ उनके द्वारा किये जाते व्यभिचारों एवं " कुडे " [बुरे] कर्मों तक का वर्णन किया है[१]।

जाग्रत मना इन कवियों द्वारा कृत उल्लेखों एवं वर्णनों के अतिरिक्त संप्रदाय के अनुयायियों ने अपने आचार्यों की रहन सहन एवं वेश भूषा के जो वर्णन किये हैं उनसे भी प्रस्तुत धर्म के आचार्यों एवं अनुयायियों की विलासिता एवं धर्म बहिर्मुखता स्पष्ट होती है[२]। विट्ठलनाथजी के प्रमुख शिष्य एवं संप्रदाय के

---

१. गोंसाईजी गुरू जेह्ना समरपणी सरदार ।
तन मन धन सोंपि तेह्ने निरमल पोतानी नार ।
वैष्णव वैष्णवमां आचरे रास मंडलनी रीत ।
वसंत रमे छे वैष्णवो परस्परे बहु प्रीत ।
व्यभिचारे वेश वगोवता करे कामिनियोना काल
नर नारी मले छे एकठां करे छे कुडा करम ।
-- वैष्णव धर्मनो इतिहास, पृ. ४११

२. दृष्टव्य: श्री महाप्रभु वल्लभाचार्य, पृ. ८

प्रसिद्ध कवि गोपालदास ने स्व-रचित " वल्लभाख्यान " [सं० १६२६ वि०] में अपने गुरु श्री विट्ठलनाथजी के वैभव का जो तादृश चित्रण किया है वह इस कथन की पुष्टि के लिए दृष्टव्य है।[1]

---

१. विबुध वाहि वास वसुमति उपरे, श्री वल्लभकुंवरनी टेहल करवा
घोषार्थी वेगे पाउ धारे ते गिरि भणी, श्री गिरिराज धरणीनो ताप
-हरवा । ८
फुल फेंटे भर्यां, वसन वाघा तणा, विविध भूषण ते अंग धरवा
तुरंग चाल्यो वायु वेगे उतावळो, जाणे नौका चाली सिंधु तरवा । ६
रूप केउ ते भिन्न थई विस्तरे विविध लीला करे भजन सार
विविध वचनावली नेण सेंणे करी संगना सूचवे निस विहार । ११
रत्न मुक्तावली पाटसूत्रे करी, गलसरी शोभिता करे सिंगार
विविध कुसुमावली ग्रथित हाथे करी, एक एकने कंठे आरोपे हार ।१२
विविध मेवा भोग मधुर मिष्टान्न रस, रसमस्या अर्पे ते बहु प्रकार,
विविध बीडा सुगंध कर्पुर एलची, लवंगपुंगी अने खेर सार । १३
व्यजन शीतल वायु मुकुर करकमल धरि, देखाडतां माहि सकल संसार,
ए अहर्निश ध्यान विट्ठलाधीशनुं, सकल कलियल दुरित कोटि जार ।१४

— म०सा०प्र०पृ०३६७

सम्प्रदाय के प्रमुख अधिकारी कृष्णदासजी के समय [वि०सं०१६१८-१६] से संप्रदाय के अंतरंग सखाओं में भी निंद्य विकृतियाँ देखी जा सकती है। स्वयं कृष्णदास अधिकारी और गंगा क्षत्राणी का प्रेम प्रसंग संप्रदाय में प्रसिद्ध है[1]।

अखा ने अपनी रचनाओं में जैनों के कर्मवाद, केश, लुंचन वाद विवाद एवं मूर्तिपूजन-आराधन के जो उल्लेख[2] किये हैं उनसे जैन धर्म के अनुयायियों की धर्मविमुखता एवं बाह्याडंबरोन्मुखता की स्पष्ट सूचना मिलती है। तथ्य यह है कि अखा के समय तक आते आते बड़े बड़े देरासर - उपाश्रय बंधवाना, विपुल एवं बहुविध साहित्य सर्जन करना, अपने आश्रयदाता राजाओं की बिरुदावलियों का कथन करना एवं धर्म के परंपरागत आचारों का कट्टरता-पूर्वक यथावत् निर्वाह करना - करवाना आदि को ही धर्म समझा जाने लगा था

---

१. दृष्टव्य: श्री महाप्रभु वल्लभाचार्यजी, पृ०२१५

२. अ. खट दर्शन खोजे अखा तामे खरे विगूचे जैन ।

आत्म लक्ष बिन अंध है, चले कर्म के नैन ।। ३।। कर्मकांड अंग, साखी ।।

आ. सो निकटतें दूर पडे, ज्युं जैन वसत कंठ गंग ।

इ. पढ़े पंडित और सेवडा बात करनके काज ।। २०।।

– भोली भक्ति अंग - साखी

ई. वीसर्युं तो संतने जई पुछ तोड़े जोड़े का दाढी मछू ।। ३८१ ।।

-छप्पा

उ. लोहनो काळ रूपा ना देव एक देरासर थाती सेव

तेमां आवी पारस रह्यो, त्यारे सर्व साज सोनानो थयो ।। ३६५ ।।

– छप्पा.

१७ वीं शती के जैन संत कवि आनंदघन की रचनाओं से भी इस कथन की पुष्टि होती है[१]।

इस्लाम धर्म में प्रवर्तित बहिर्मुखता को भी अखा की रचनाओं से स्पष्ट उल्लेख मिलते हैं। पशु हिंसा[२] करना, बंदगी, नमाज़, रोजा के वास्तविक अर्थ को नहीं समझना[३] अन्य धर्मावलंबियों के साथ तकरार[४] में उतर कर

---

१. अ. गच्छना भेद बहु नयन निहाळतां, तत्वनी वात करतां न लाजे
उदर भरणादि निज काज करतां थकां, मोह नडीया कलिकाल राजे।
आ. बहिरातम मूढ़ा जग जेता, माया के फंद रहेता।
-श्री आनंदघनजीनां पदो. पद २७. पृ. २६८
इ. जोगीए मिलीने जोगण करी, जतीए जतणी बनावी
ई. कोईए मुंडी, कोईए लोची, कोईए केश लपेटी
कोई जगावी, कोई सुती छोडी, वेदन किण ही न मेटी।
-वही, पद. ४८. पृ. ५०४

२. अखा संसारी जीवका, जेता सुख सहराय।
पशु यवन द्वारका, अधोमूख टांग्या जाय।।१२।। संसारी अंग-- साखी

३. जो करि जाने बंदगी तो आपा छोड गुमान।। ४।। तपास अंग -साखी

४. अ. जैन कर्मनी सदा दे शीख, यवन माने कुराने शरीफ
अखो सो बांधे बाकरी, कोय न जुवे हरि पाछो फरी ।।२।। तपास अंग, साखी
आ. नहि हरि हिन्दू अखा ना मीरा मुसलमान
बीच खेंचाताणी मत करे पियुका नहीं पहिचान।। ३।।
-- तपास अंग-साखी
इ. आपे आपमां उठी बल्ला, एक कहे राम एक कहे अल्ला। ३०३। छप्पा

दुई का झगड़ा खड़ा करना[१] आदि धर्म रहित कार्यों में पगे मुसलमानों को भी अखा ने फिटकारा है। ' पियु ' को भूल कर पेबंद [देश - टेक] में अटक रहनेवाले फकीर भी अखा की नज़र से नहीं बचे हैं[२]।

इस प्रकार शैवों एवं वैष्णवों के पाखंड एवं बाह्याचार को ही धर्म का मूल तत्त्व मान लेने की, जैनियों को स्थूल कर्म में संलग्न रहने की और मुसलमानों को अपनी विजय के नशे में पगे रहने की बहुत कुछ प्रेरणा तत्कालीन शासन की ओर से भी प्राप्त हुई। विशेषकर अकबर का शासन स्थापित होने से लेकर शिवाजी द्वारा सूरत- लुट तक के अखा के समय में आर्थिक समृद्धि एवं राजकीय शांति रहने के कारण भोग विलास की प्रवृति प्रबल रही।

सुलतान, बादशाह, सूबेदार, अमीर, आदि सभी बड़े-बड़े महलों, शाही बागों, और ' होजे कुतुब ' में अपनी हजारों बाँदियों और नर्तकियों के साथ राग- रंग रत रहते थे। डॉ॰कृष्णलाल झवेरी का मत है कि मुसलमान सत्ता ने यहाँ की प्रजा को कुछ विलासी बना कर होज, बाग, बगीचे, आदि का उपयोग करना सिखाया; बीरयानी, पुलाव आदि मुसलमानी खानों की लहेज्जत चखना सिखाया; जामा, डगला, इजार, पायजामा आदि वजन में हलके सुफियाना और मुलायम पोशाक की ओर खींच

---

१. दुई भानी दीदार कर, जो बंदे : तुज प्यार
तलब विहोणा तू रहा, हे हजूर किरतारा।१३।। शबुद परिचय अंग-साखी

२. गई फिकर सो फकीर हुआ, कुछ पेबंद में पियु नाहीं पेठा ।। ५१ ।
— झूलणा ।

३. म॰सा॰प्रवाह खंड-५.पृ॰१६०-६१

अहमदाबाद के सुलतान कुतबुद्दीन के समय में रचित वसंत विलास[1] [सन् १५६२ ई०] तथा दक्षिण भारत के तेलंगाना प्रदेश के कवि वेंकटधारीन द्वारा संस्कृत में रचित विश्वगुणादर्श चम्पू [सन् १६४० ई०] में वर्णित[2] आनंदोत्सवों एवं समृद्धि से भी समाज की वैभव विलास वृत्ति का अनुमान लगाया जा सकता है ।

---

१ वनि विरच्यां कदलीहर, दीहर मंडप माल
तलीआ तोरण सुंदर चंदरवा लि विशाल । ८ ।
खेलन वावि सुहाली, जाली, सुख विश्राम,
मृग-मद पूरि कपूरहिं पूरिहिं जल अभिराम । ६ ।
रंगभूमि सजकरि फारी कुंकुम घोल,
सोवन सांकल सांधी बांधी चंपक दोल । १० ।
तिहां विलसई सवि कामुक जामुक हृदयि रंगि,
कामुजिस्या अलवेसर वेस रचई वर अंगि । ११ ।

— म० गु० सा० प्र० पृ० २१

२. स एष सर्वसम्पदामास्पदतया त्रिदशालयस्यादेश इव गुर्जरदेशश्चक्षुषो: सुखा करोति ।

अत्रहि— सकर्पूरस्वादु क्रमुकनवर्वीटीरसलसन्
मुखा: सर्वे श्लाघापद विविधदिव्यांबरधरा: ।
कनद्रत्नाकल्पा घुमघुमित देहाश्चघुसृणैर्
युवानो मोदन्ते युवतिभिरमी तुल्यरतिभि: ।।

अत्रवधूनामप्यन्यादृशं सौन्दर्यम् —
तप्त स्वर्णसवर्णमंगकमिदं ताम्रो मृदुश्चाधर:
पाणी प्राप्त नवप्रवालसरणी वाणीसुधाधोरणी: ।
वक्त्रं वारिजमित्रमुत्पलदल श्रीसूचने लोचने ।
के वा गुर्जरसुभ्रुवामवयवा यूनां न मोहावहा: ।।

—गुजरात एन्ड इट्स लिटरेचर, पेज. २२८

समाज की ईश्वर विमुखता, उसके दंभ, पाखंड, मिथ्या गुरुओं एवं विलासी धर्माचार्यों के अधार्मिक व्यवहार, धार्मिक झगड़े एवं वितंडावाद के प्रति अखा में जो आक्रोश देखा जाता है उसको गुजराती विद्वानों ने "अलौकिक अग्नि" [Prophetic Five] "तृतीय नेत्र की प्रसादी"[1] और "अग्निकुंड की ज्वालायें" कहा है।[2] कहा जा सकता है कि प्रस्तुत युग के रंग राग के उपलब्ध इत्र, फुल, शराब, फारसी नृत्य आदि सभी अखा के "तृतीय नेत्र" की अग्नि का "इंधन" बना। अखा ने वैष्णव संप्रदाय के ब्याज से अपने समय के शैव- शाक्त, जैन, बौद्ध, इस्लाम आदि सभी धर्म संप्रदायों की बर्हिगामिता के ऊपर हथोड़ा चलाया। सोना चाँदी पर धीरे धीरे हथोड़ा चलानेवाला यह स्वर्णकार सोने के अलंकार गढ़ना छोड़कर लोहे की प्रचंड मूर्ति गढ़नेवाला महान व्यक्तित्वपूर्ण लोहार बना। अपने समय के धार्मिक विधि विधान, मिथ्याचार एवं विलास केउय दुर्ग को उसने एक ही हथोड़े से जर्जरित कर "सौ सुनार की और एक लोहार की" कहावत चरितार्थ की।

---

१. नरसिंह महेता अने मीराँनां कोई कोई ऊर्मि काव्यो विषे आपणे गुजरातीओ एके अवाजे स्वीकारीशुं के ए "इन्स्पायर्ड" त्रीजा नेत्रनी प्रसादी छे. अखानी टीकानी धगधगती शिखाओ विशे पण आपणे केटलेक ठेकाणे संमत थई शकीशुं के ए "अग्नि अलौकिक" [Prophetic Five] छे.

"लिरिक" - प्रो. बी. के. ठाकोर. १९२८. पृ. १२४-१२६-१३१

२. आ सोनीनी एरण ऊपर चमकता थोडाक चमकारा म्हें तमने बताव्या, एने आपणे एनी भट्ठीनी ज्वालाओ कहीए तो ?

-क्लासिकल लेंग्वेज एन्ड लिटरेचर, प्रो. एन. बी. दिवेटिया

पृ. १०७ थी ११०